4 विधिक प्रकोष्ठ

राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 की धारा 10 के अंतर्गत आयोग को प्रदत्त अधिदेश के अनुसरण में आयोग ने वर्ष 2008–09 के दौरान अनेक कानूनों की समीक्षा की। आयोग द्वारा महिलाओं के हितों को प्रभावित करने वाले नए कानूनों/ नीतियों के अधिनियमन और साथ ही मौजूदा कानूनों में संशोधन के संबंध में की गई सिफारिशों का संक्षेप में नीचे उल्लेख किया गया है:

(क) संबंधित वर्ष के दौरान कानूनों की समीक्षा

(i) महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम, 2005 के क्रियान्वयन की स्थिति की समीक्षा

घरेलू हिंसा एक ऐसा मुद्दा है, जिससे सभी जातियों, धर्मों, वर्गों और लिंगों के व्यक्तियों को जूझना पड़ रहा है। महिलाओं को शारीरिक हिंसा को सहना पड़ता है, जो उन्हें उनके घर के भीतर ही दी जाती है। किया गया हिंसात्मक व्यवहार काफी गंभीर, कष्टकारक, अपमानजनक और बार–बार किया जाता है और प्रायः पीड़िता भय, लज्जा और अशक्तता से इतना ग्रस्त होती है कि वह कुछ भी करने की स्थिति में नहीं रहती। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा "घरेलू हिंसा – महिलाएं और बालिकाएं" विषय पर किए गए एक सर्वेक्षण से यह ज्ञात होता है कि प्रत्येक देश में 20 प्रतिशत से लेकर 50 प्रतिशत तक महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। भारत में किए गए अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि 40 प्रतिशत से भी अधिक विवाहित महिलाओं पर लात–घूसों का प्रहार किया जाता है, उन्हें थप्पड़ मारा जाता है या उनके साथ यौन अतिचार किया जाता है और उनके साथ ऐसा व्यवहार केवल इसलिए होता है कि उनके पति उनके द्वारा भोजन पकाने, साफ–सफाई करने से असंतुष्ट रहते हैं या फिर उनके पति के मन में उनके प्रति किसी न किसी प्रकार की असंतुष्टि होती है।

लॉयर्स कलेक्टिव की निर्देशक सुश्री इंदिरा जयसिंह के अनुसार, घरेलू हिंसा के संबंध में सिविल कानून लाने की आवश्यकता महिलाओं द्वारा अत्यधिक निकट संबंधों से हिंसात्मक व्यवहार का सामना किए जाने की स्थिति में उन्हें कानूनी सहायता उपलब्ध कराने के संबंध में प्राप्त अनुभवों से ज्ञात हुई है। देशभर के अनेक महिला संगठनों द्वारा लगभग एक दशक तक विचार–विमर्श करने और सर्वसम्मति विकसित करने के पश्चात ही अंततः घरेलू हिंसा से महिलाओं की संरक्षा अधिनियम, 2005 को 26 अक्तूबर, 2006 को प्रवृत्त किया जा सका। इस कानून का अधिनियमन महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम समझा जाता है।

2005 से पहले घरेलू हिंसा के संबंध में उपलब्ध कानूनी प्रावधान में निम्नलिखित कमियां थीं:

- "घरेलू हिंसा" पद के अंतर्गत दी गई परिभाषा में महिलाओं द्वारा अपने निकटस्थ संबंधियों से हिंसात्मक व्यवहार के संबंध में अनुभूत व्यापक अनुभव का उल्लेख नहीं था।
- महिलाओं के निवास संबंधी अधिकार या उनके द्वारा सिविल उपचारों को प्राप्त करने के अधिकार को मान्यता प्रदान करने के लिए कोई कानून उपलब्ध नहीं था।
- महिलाओं द्वारा हिंसा से कानूनी राहत केवल वैवाहिक संबंधों के अंतर्गत ही प्राप्त की जा सकती है।
- सिविल कानूनों के अंतर्गत राहत में संरक्षित कानूनी कार्यवाहियां शामिल थीं, जिसके अंतर्गत कोई संतोषजनक परिणाम प्राप्त होने की कोई गारंटी उपलब्ध नहीं थी।

- आपराधिक कानूनों में समझौते की कोई गुंजाइश नहीं थी।
- इस प्रकार महिलाओं की न्यायालय तक पहुंच के लिए कोई भी तंत्र उपलब्ध नहीं था।

तत्पश्चात यह निर्णय लिया गया कि घरेलू हिंसा पर एक कानून में निम्नलिखित शामिल किया जाए:

- कानून के बुनियादी अभिप्राय अर्थात घरेलू हिंसा पर रोक लगाने के उद्देश्य का स्पष्ट उल्लेख हो।
- घरेलू हिंसा से मुक्त रहने का अधिकार तथा घरेलू हिंसा को महिलाओं के मानवाधिकारों का उल्लंघन मानने के संबंध में एक स्पष्ट और असंदिग्ध कथन।
- घरेलू हिंसा की एक ऐसी परिभाषा, जिसमें महिलाओं के साथ अशोभनीय बर्ताव किए जाने का यथार्थ रूप में उल्लेख किया जाए।
- "साझे घर" की परिभाषा ताकि अधिकारों की घर के भीतर संरक्षा की जा सके।
- महिलाओं की हिंसा से संरक्षा के लिए दी जा सकने वाली राहत।
- हिंसा की पीड़िताओं के लिए उपलब्ध अवसंरचनाात्मक सुविधाएं जिनसे पीड़िताओं को उपचार उपलब्ध हो सके।

राष्ट्रीय महिला आयोग को दिए गए अधिदेश के एक हिस्से के रूप में यह आवश्यक समझा गया कि एक ऐसा सूचना विनिमय तंत्र विकसित किया जाए जहां से महिलाओं के साथ हुए हिंसात्मक व्यवहारों के संबंध में दर्ज कराई शिकायतों, कानून के क्रियान्वयन की दिशा में राज्य सरकारों द्वारा की गई कार्रवाई, संरक्षण अधिकारियों की नियुक्ति, सेवा प्रदाताओं का पंजीकरण, अधिनियम के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं जैसे मुद्दों के संबंध में जानकारी प्राप्त हो तथा उनका मूल्यांकन किया जा सके।

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आयोग ने **लॉयर्स कलेक्टिव** के सहयोग से महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम के क्रियान्वयन विषय पर पहली कार्यशाला **11 और 12 मई, 2007 को मुंबई में**, दूसरी कार्यशाला **21 और 22 जून, 2007 को बेंगलुरु में, तीसरी कार्यशाला 21 और 22 नवंबर, 2007 को चंडीगढ़ में, चौथी कार्यशाला 11 और 12 दिसंबर, 2007 को जयपुर में तथा इसके बाद की पिछली अंतिम कार्यशाला 9 फरवरी, 2008 को कोलकाता में आयोजित की गई थी।**

इन कार्यशालाओं में राज्य सरकारों के विभागों, पुलिस, न्यायिक अधिकारियों और गैर–सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया।

सिफारिशें:

अब चूंकि हमारे पास एक कानून है, हमें यह सुनिश्चित करना है कि इसे क्रियान्वित और प्रवृत्त किया जाए ताकि महिलाएं, जिनके लिए यह कानून बनाया गया है, इससे अवगत हों, इस तक उनकी आसान पहुंच हो और वे इस कानून का प्रभावी ढंग से उपयोग कर सकें। अतः निम्नलिखित सिफारिशें की जाती हैं:

संरक्षण अधिकारी

(i) पूर्णकालिक संरक्षण अधिकारी नियुक्त किए जाने की आवश्यकता है। दिल्ली और हरियाणा की तर्ज पर संविदा आधार पर नियुक्ति किए जाने पर विचार किया जा सकता है।

(ii) महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम के क्रियान्वयन हेतु एक सहायक व्यवस्था स्थापित की जाए, जिसमें विशेष संरक्षण अधिकारी और उनकी सहायता के लिए पर्याप्त कर्मचारियों को नियुक्त किया जाए ताकि पीड़ित महिलाओं को शीघ्र न्याय उपलब्ध हो सके।

(iii) संरक्षण अधिकारियों के रूप में कार्य करने के लिए गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका पर भी विचार किया जा सकता है, जिसके लिए उन्हें मानदेय दिया जाए बशर्ते कि उनके पास कार्यालय, परिवहन व्यवस्था, कर्मचारी आदि जैसी न्यूनतम बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हों।

(iv) संरक्षण अधिकारियों की संख्या इतनी पर्याप्त हो कि वे तालुका/ ब्लॉक स्तर पर पहुंच सकें तथा प्रत्येक पंचायत में एक महिला न्याय समिति गठित करने पर भी विचार किया जा सकता है।

(v) आंध्र प्रदेश पुलिस द्वारा अपनाई गई घरेलू घटना रिपोर्ट (डी आई आर) सूचकांक मॉडल को इस निर्देश के साथ सभी राज्यों को परिचालित किया जाए कि इस मॉडल को उन राज्यों द्वारा अपनाया जाए। संरक्षण अधिकारी को घरेलू घटना रिपोर्ट (डी आई आर) के रखरखाव हेतु प्रभारी नियुक्त किया जाए तथा संरक्षण अधिकारी द्वारा समन आदि जारी करने से संबंधित रिकार्ड को दर्ज किए जाने वाले सेवा रजिस्टर में प्रविष्टि करने के लिए उत्तरदायी बनाया जाए।

(vi) पुलिस/महिला एवं बाल विकास विभाग/ संरक्षण अधिकारी/ पुलिस अधीक्षक के बीच भूमिका सुनिश्चित और स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है और इस संबंध में व्यापक प्रचार किया जाए।

सेवा प्रदाता

(i) अधिनियम के नियम 11 के अनुसार सेवा प्रदाता के संबंध में अधिसूचना जारी करना आवश्यक है। सेवा प्रदाताओं की उपयुक्तता के संबंध में विधिवत सत्यापन किए जाने के पश्चात उनका पंजीकरण अवश्य किया जाए तथा उनके फोन नंबरों और पतों को निश्चित रूप से प्रकाशित किया जाए और उपलब्ध कराया जाए।

(ii) धारा 10 के तहत अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत सेवा प्रदाता को डी आई आर रिकार्ड करने और उसे मजिस्ट्रेट को अग्रेषित करने की शक्ति प्राप्त है।

(iii) यह उपबंध ऐसे गैर–सरकारी संगठनों और अन्य संगठनों जिन्होंने अधिनियम के अंतर्गत अपना पंजीकरण भी कराया है या जिनका संबंधित प्राधिकारियों द्वारा पंजीकरण नहीं किया गया है, के लिए अवरोधक है और उन्हें प्रथम दृष्टया आधार पर महिलाओं की सहायता करने से रोकता है। दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं को ये सुविधाएं उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है।

(iv) सरकार द्वारा विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में मानचित्र संबंधी सूचनाएं तथा सरकार द्वारा सहायताप्राप्त सेवाएं उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है।

(v) परामर्शदाताओं के लिए मानदेय का प्रावधान

(vi) ऐसे सेवा प्रदाताओं का उत्तरदायित्व निर्धारित किया जाए जो अपना पंजीकरण करा पाने में विफल रहते हैं और पीड़ित व्यक्ति को सेवाएं प्रदान नहीं कर पाते हैं।

आश्रय गृह एवं चिकित्सीय सुविधाएं

(i) राज्य, जिला और ब्लॉक स्तरों पर उपलब्ध सुविधाओं को अधिसूचित करने की आवश्यकता।

प्रशिक्षण, अभिमुखीकरण एवं प्रसार :

(i) महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम के क्रियान्वयन में शामिल स्टेकहोल्डरों के लिए प्रशिक्षण तथा अभिमुखीकरण कार्यक्रम तथा संरक्षण अधिकारियों, पुलिस अधीक्षकों, पुलिस एवं न्यायपालिका के लिए अलग से प्रशिक्षण मैनुअल विकसित किए जाने की आवश्यकता है।

(ii) हिंसा के शिकार व्यक्तियों की सहायता के लिए अन्य प्रमुख घटकों, जैसेकि ग्राम पंचायतों और समाज

न्याय समितियों, स्वयं सेवा समूहों और परिसंघों, आंगनवाड़ी कर्मचारियों आदि के लिए अभिमुखीकरण एवं जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने की आवश्यकता है।

(iii) प्रिंट, इलेक्ट्रानिक मीडिया और अन्य प्रचार माध्यमों के जरिए मीडिया अभियानों को चलाकर कानून के संबंध में जागरूकता पैदा करना।

(iv) अधिनियम का सभी क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद करना ताकि इसका आसानी से प्रचार–प्रसार किया जा सके तथा लोग इसे समझ सकें।

केंद्रीय एवं राज्य सरकारें

(i) बहु–एजेंसी अनुक्रिया सृजित करना : घरेलू हिंसा का सामना कर रही महिलाओं को मदद पहुंचाने के लिए संरक्षण अधिकारियों, पुलिस, विधि सेवा प्राधिकारियों, सेवा प्रदाताओं, परामर्शदाताओं आदि के बीच एक बहु–एजेंसी अनुक्रिया सृजित किए जाने की आवश्यकता है। इस अनुक्रिया के लिए सरकार के विभिन्न विभागों के बीच तालमेल तथा सिविल समाज के संगठनों के बीच भागीदारी की आवश्यकता है।

(ii) अधिनियम के क्रियान्वयन हेतु बजट का पर्याप्त आबंटन।

(iii) परिवार न्यायालयों/फास्ट ट्रैक न्यायालयों को प्रबल/सशक्त बनाना – ऐसे न्यायालयों द्वारा सभी मामलों पर निर्णय किया जाना है।

(iv) आश्रय गृहों की संख्या में वृद्धि करना – इसके लिए आउटसोर्स किया जा सकता है तथा कारपोरेट क्षेत्रों से अंशदान प्राप्त करके निजी क्षेत्रों की भागीदारी प्राप्त की जा सकती है, जिसके लिए कर में रियायतें प्रदान की जा सकती हैं।

(v) पारिवारिक विवादों के समाधान और उनमें मध्यस्थता के लिए महिला आयोगों द्वारा निभाई जा रही भूमिका को मान्यता प्रदान करने की आवश्यकता।

एकल खिड़की निष्पादन/ भूमिका की स्पष्टता

- दहेज प्रतिषेध अधिनियम, आईपीसी की धारा 498क, घरेलू हिंसा अधिनियम इन अर्थों में अति व्याप्त होते हैं कि वे सभी वैवाहिक संबंधों में असमन्वय और हिंसा के विभिन्न पहलुओं से संबंधित हैं।
- राज्य सरकारों ने इन अधिनियमों के क्रियान्वयन में अलग–अलग ढंग से अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त की हैं – कुछ राज्यों में पुलिस/समाज कल्याण विभाग के अधिकारियों आदि को दहेज प्रतिषेध अधिकारियों/संरक्षण अधिकारियों के रूप में कार्य करने के लिए अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है जबकि कुछ राज्यों में इस संबंध में पुलिस को अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है।
- इस प्रणाली के कारण कार्यवाहियों की बहुलता उत्पन्न होती है।
- सीआरएल सीपीडब्ल्यूपी संख्या 539/86 – डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल सरकार के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के दिनांक 18.12.1996 के निर्णय में दिया गया आदेश :

  बिना वारंट के गिरफ्तार करने की शक्ति का प्रयोग शिकायत की उपयुक्तता और यथार्थता के संबंध में कुछ जांच किए जाने के पश्चात केवल इस बात का उपयुक्त रूप में समाधान हो जाने के पश्चात तथा यह विश्वास हो जाने के पश्चात कि गिरफ्तारी करना दोनों व्यक्तियों के लिए अनिवार्य और आवश्यक है, किया जाए।

- अनेक राज्यों में पुलिस अब परामर्श और समझौता कराने का सहारा ले रही है तथा आईपीसी की धारा 498क के अंतर्गत तत्काल कार्रवाई नहीं कर रही है।

इस दिशा में आंध्र प्रदेश के मॉडल को अपनाकर घरेलू हिंसा अधिनियम तथा आईपीसी की धारा 498क का उपयुक्त रूप में समावेश करके पर्याप्त उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है।

- आईपीसी की धारा 498क के अंतर्गत शिकायत प्राप्त होने पर भी परामर्श और समझौता कराने की प्रवृत्ति अपनाई जाती है न कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने और संबंधित व्यक्तियों को आरोपित करके उन्हें गिरफ्तार करने की, क्योंकि इस संबंध में उपबंध संज्ञेय और गैर–जमानती है।
- ऐसी स्थिति में आंध्र प्रदेश मॉडल से उपयोगी लाभ प्राप्त हो सकता है।
- यह पुलिस और संरक्षण अधिकारी के बीच भूमिका की स्पष्टता भी सुनिश्चित करता है तथा एजेंसियों के बीच उचित समन्वय भी सुनिश्चित करता है।
- आयोग की यह प्रबल राय है कि परामर्श का कार्य पुलिस द्वारा न किया जाए बल्कि इसके लिए व्यावसायिक परामर्शदाताओं या घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत अभिनिर्धारित किसी अन्य प्राधिकारी की सेवाएं ली जाएं तथा उसके पश्चात उपयुक्त कार्रवाई की जाए।

महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन

(i) घरेलू घटना रिपोर्ट (डी आई आर) को कौन लिख सकता है और मजिस्ट्रेट को अग्रेषित कर सकता है। धारा 9ख के अंतर्गत संरक्षण अधिकारी का यह कर्त्तव्य है कि वह घरेलू घटना रिपोर्ट तैयार करे और उसे मजिस्ट्रेट को अग्रेषित करे, धारा 10(2)(ख) के अंतर्गत सेवा प्रदाता घरेलू घटना रिपोर्ट दर्ज कर सकते हैं और उसे मजिस्ट्रेट को अग्रेषित कर सकते हैं। नियम 5 के अंतर्गत, केवल संरक्षण अधिकारी और पुलिस अधीक्षक ही डी आई आर लिखने के लिए प्राधिकृत हैं।

ये उपबंध अत्यधिक अवरोधक प्रकृति के हैं और ये महिला आयोगों तथा महिलाओं से संबंधित विवादों के समाधान में सक्रिय रूप से जुटे अन्य संघों की भूमिका को कम करते है। यह सत्य है कि ये संगठन अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत आवेदन दायर कर सकते हैं किंतु धारा 12 का परंतुक इन संगठनों द्वारा की जाने वाली ऐसी किसी भी भूमिका को कम करता है। क्योंकि ऐसी कोई भी कार्रवाई संरक्षण अधिकारी/ पुलिस अधीक्षक से प्राप्त डी आई आर पर निर्भर करती है, यहां तक कि पुलिस रिपोर्ट भी संरक्षण अधिकरी/ पुलिस अधीक्षक द्वारा दायर या दायर की जाने वाली डी आई पर निर्भर करेगी। **अतः इस अवरोधक उपबंध को संशोधित किए जाने की आवश्यकता है तथा महिलाओं के हितों के लिए कार्य करने वाले या मानव अधिकारों के संवर्धन और संरक्षण के लिए कार्य करने वाले किसी भी सांविधिक निकाय या पुलिस या किसी भी अन्य गैर–सरकारी संगठनों को ऐसी रिपोर्ट दायर करने के लिए प्राधिकृत किया जाए, जिसे महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम के अंतर्गत डी आई आर समझा जाएगा।**

(ii) **"साझा घर"** की परिभाषा : एस आर बतरा बनाम तरुणा बतरा के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय की समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है:

न्यायालय ने अपने निर्णय में ससुराल पक्ष के संबंधियों द्वारा स्व–अर्जित संपत्तियों को "साझा घर" की परिधि से बाहर रखा है। ऐसा करते हुए, न्यायालय ने कानून के उस स्पष्ट मत का जिसका धारा 2 (ध) में उल्लेख किया गया है, जिसके अनुसार "साझा घर" का आशय ऐसे घर से है, जिसमें पीड़ित व्यक्ति रहता है या किसी भी चरण पर एक घरेलू संबंध के रूप में रहा था ..... इस तथ्य पर विचार किए बिना कि प्रतिवादी या पीड़ित व्यक्ति का साझे घर पर कोई अधिकार, मालिकाना हक या हित हो अथवा नहीं।

इस संबंध में महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम में यह स्पष्टतः उल्लेख किया गया है कि साझे घर का स्वामित्व साझे घर में रहने के अधिकार से संबंधित नहीं है {(धारा 17 (1)}। न्यायालय ने यह उल्लेख किया है कि मांगी गई राहत प्रदान नहीं की जा सकती क्योंकि प्रश्नाधीन परिसर संयुक्त परिवार की संपत्ति नहीं है और इसलिए इसे "साझा घर" नहीं कहा जा सकता। यह भी धारा 17(1) के स्पष्ट उपबंध के विरुद्ध है।

ऐसी व्याख्या से महिलाओं द्वारा अनिवासी भारतीयों से विवाह के संबंध में दायर किए गए आवेदनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना सुनिश्चित है, जिनमें पति अपनी पत्नी को अपने माता–पिता के घर में लेकर आता है, वहां कुछ महीनों तक रहता है और तब विदेश चला जाता है। पत्नी उस मकान में, जो संभवतः उसके सास–ससुर द्वारा स्वतः अर्जित संपत्ति है, रहना जारी रखती है। बतरा के मामले में दिए गए निर्णय की व्याख्या से न्यायालयों के लिए स्वतः रूप में यह कहना आवश्यक हो जाएगा कि चूंकि इसे "साझा घर" नहीं माना जा सकता, अतः पत्नी को ऐसे मकान में रहने का कोई हक नहीं है, चाहे उसका पति उसके लिए वीज़ा या नये घर में आवास की व्यवस्था करे या न करे। क्या इनसे अधिनियम का मूल उद्देश्य ही विफल हो जाता है – जो महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने से संबंधित है, क्योंकि इस प्रकार के मामले में लिए गए निर्णय से यही तथ्य सामने आता है।

अतः परिभाषा खंड 2 (ध) में संशोधन की आवश्यकता है तथा यह सुझाव दिया जाता है कि अधिनियम के संबंधित उपबंध को निम्नानुसार उपयुक्त रूप में संशोधित किया जाएः

मौजूदा उपबंध	प्रस्तावति संशोधन
"साझा घर" का आशय एक ऐसे घर से है, जहां पीड़ित व्यक्ति **रहता है** या किसी भी समय घरेलू संबंध के रूप में अकेले या प्रतिवादी के साथ **रहा हो**।	धारा 2(ध) "साझा घर" का आशय एक ऐसे घर से है, जहां पीड़ित व्यक्ति निवास करता है या किसी भी समय घरेलू संबंध के रूप में एक पर्याप्त अवधि तक (तीन वर्ष या अधिक) अकेले या प्रतिवादी के साथ रहा हो।
(इसमें ऐसा घर भी शामिल है, जिन पर पीड़ित व्यक्ति और प्रतिवादी का या तो संयुक्त रूप में स्वामित्व हो या किराये पर लिया गया हो, उनमें से किसी भी एक व्यक्ति का स्वामित्व हो या किराये पर लिया गया हो, जिसके संबंध में पीड़ित व्यक्ति या प्रतिवादी का दोनों का संयुक्त रूप में या एकल रूप में कोई हक, मालिकाना हक, हित या इक्विटी हो तथा जिसमें ऐसा घर शामिल हो, जो उस संयुक्त परिवार का हो, जिसका प्रतिवादी एक सदस्य है।) इस बात पर विचार किए बिना कि प्रतिवादी या पीड़ित व्यक्ति का "साझे घर" पर कोई अधिकार, मालिकाना हक या हित है अथवा नहीं।	(इसमें ऐसा घर भी शामिल है, जिस पर पीड़ित व्यक्ति और प्रतिवादी का या तो संयुक्त रूप में स्वामित्व हो या किराये पर लिया गया हो, उनमें से किसी भी एक व्यक्ति का स्वामित्व हो या किराये पर लिया गया हो, जिसके संबंध में पीड़ित व्यक्ति या प्रतिवादी या दोनों का संयुक्त रूप में या एकल रूप में कोई हक, मालिकाना हक, हित या इक्विटी हो तथा जिसमें ऐसा घर शामिल हो, जो उस संयुक्त परिवार का हो, जिसका प्रतिवादी एक सदस्य है।) इस बात पर विचार किए बिना कि प्रतिवादी या पीड़ित व्यक्ति का "साझे घर" पर कोई अधिकार, मालिकाना हक या हित है अथवा नहीं।

धारा 2(ध) के अंतर्गत "साझे घर" की परिभाषा में यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता है कि घरेलू संबंध के अंतर्गत निर्वाह कर रही महिला, जिसे हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है, के हितों और उसके वैधानिक अधिकारों की रक्षा की जा सके, जबकि इसके साथ ही शीर्ष न्यायालय द्वारा बतरा मामले में दिए गए निर्णय में व्यक्त न्यायालय की चिंता को भी दृष्टिगत रखा जा सके। अतः विवाहित महिला जो ऐसे मकान में रह रही है, जिसका स्वामित्वाधिकार उसके पति के पास न होकर उसके सास–ससुर के पास हो, किंतु वह घर उसका ससुराल हो, जहां वह ब्याह कर आई हो, को संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए इस परिभाषा में निम्नलिखित संशोधनों को करने का सुझाव दिया जाता है।

तथापि, इसके साथ ही, न्यायालय द्वारा व्यक्त की गई चिंता के दृष्टिगत नई परिभाषा में यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अधिनियम के प्रयोजनार्थ महिला के सास–ससुर के स्वामित्वाधीन केवल वही घर "साझा घर" माना जाएगा, जिसमें वह महिला ब्याहकर लाई गई है। यह उपबंध बतरा मामले में दिए गए निर्णय में उल्लिखित रक्षोपायों को उपलब्ध कराता है।

(iii) यह कानून संरक्षण अधिकारी द्वारा दी गई रिपोर्ट के साक्ष्यात्मक महत्त्व या उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के संबंध में भी मूक है। संरक्षण अधिकारी की रिपोर्ट का कोई साक्ष्यात्मक महत्त्व नहीं है। कुछ कानूनों जैसेकि भूमि अधिग्रहण अधिनियम में बिक्रीनामे को साक्ष्य माना जाता है। संरक्षण अधिकारी को बाद में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए न्यायालयों द्वारा बार–बार उपस्थित होने के लिए कहा जा सकता है, जिसके कारण उनकी कार्य प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

(iv) अधिनियम की धारा 29 के अंतर्गत, मजिस्ट्रेट के **आदेशों** पर अपील की जा सकती है, जिसका आशय यह है कि अंतरिम आदेशों के संबंध में भी अपील की जा सकती है। चूंकि प्रत्येक आदेश को अपीलयोग्य बना दिया गया है, अतः इस संबंध में कोई सीमा नहीं है, अतः इस अधिनियम के अंतर्गत अपील करने और समीक्षा करने का अधिकार संशोधित किया जाना चाहिए तथा अपील केवल अंतिम आदेशों के खिलाफ ही की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 28 में न्यायालय द्वारा धारा 25 और 26 के अंतर्गत दिया गया आदेश अपीलयोग्य हैं, **यदि वे अंतरिम आदेश नहीं हों**।

(v) वैकल्पिक विवाद समाधान महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम के क्रियान्वयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इससे न्यायालयों पर काम का भारी बोझ काफी हद तक कम हो सकता है।

(vi) धारा 31 में यह उल्लेख किया गया है कि आदेशों का उल्लंघन करना एक अपराध होगा, जिसके लिए एक वर्ष तक के कारावास की सजा दी जा सकती है। इसके साथ ही धारा 31(3) के अंतर्गत मजिस्ट्रेट को आईपीसी की धारा 498क या देहज अधिनियम के अंतर्गत किए गए किसी भी अपराध के लिए आरोप तय करने की शक्तियां प्रदान की गई हैं। धारा 32 के अंतर्गत किया गया अपराध संज्ञेय और गैर–जमानती है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये बातें परस्पर–विरोधी हैं। आपराधिक कानून के अंतर्गत ऐसा कोई भी अपराध जिसमें एक वर्ष तक के कारावास की सजा का प्रावधान हो, समन मामला कहलाता है। किसी समन मामले पर विचार करने की प्रक्रिया आईपीसी की धारा 498क के अंतर्गत किसी मामले पर विचार किए जाने की प्रक्रिया से पूर्णतः भिन्न है। इसके कारण जटिलताएं उत्पन्न होने की संभावना है। अतः इसे स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है।

(vii) इसके अंतर्गत, केवल संरक्षण आदेशों का उल्लंघन ही एक अपराध है। यह कानून अन्य आदेशों, जैसेकि आवास से संबंधित आदेशों, अभिरक्षा में लेने से संबंधित आदेशों आदि के उल्लंघन के संबंध में मूक है। अधिनियम की धारा 31 में अन्य आदेशों के उल्लंघन को दंडनीय बनाने के संबंध में संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

(viii) **नियम 3** में यह उल्लेख किया गया है कि संरक्षण अधिकारी की पदावधि न्यूनतम 3 वर्ष होगी – संविदात्मक नियुक्तियों के संबंध में यह एक संभव विकल्प नहीं होगा क्योंकि संविदा आधार पर कर्त्तव्यों के निरंतर निष्पादन की स्थिति में सरकार द्वारा संबंधित पद के नियमितीकरण की आवश्यकता उत्पन्न होगी, जिसके लिए संभवतः सरकार सहमत न हो। किसी सरकारी कार्यपालक को अतिरिक्त कार्यभार सौंपने के संबंध में मौजूदा समय में अपनाया गया विकल्प ही सही उपाय है।

(ii) तेजाब से हमले की स्थिति में पीड़ित के लिए राहत और पुनर्वास की संशोधित स्कीम

आयोग ने पहले "(तेजाब से हमला) अपराध निवारण विधेयक, 2008" नामक एक विधेयक का प्रारूप तैयार किया था। बाद में यह सुझाव दिया गया कि बलात्कार की पीड़िताओं को राहत और पुनर्वास उपलब्ध कराने के समान ही एक स्कीम लाई जाए और तदनुसार आयोग ने महिलाओं और बालिकाओं के साथ अपराधों (तेजाब से हमले) के संबंध में राहत और पुनर्वास की एक स्कीम तैयार की जो बलात्कार की पीड़िताओं के संबंध में जारी स्कीम के ही समान है। इस स्कीम की मुख्य–मुख्य विशेषताएं निम्नवत हैं:

- इस स्कीम को राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा संचालित किया जाएगा।
- इस संबंध में जिला और राज्य स्तरों के प्राधिकारी बलात्कार की पीड़िताओं के लिए राहत और पुनर्वास की योजना में सुझाए गए प्राधिकारियों के अनुसार होंगे।
- पीड़िता को इलाज के खर्च की प्रतिपूर्ति के लिए तत्काल 5,00,000/– रुपए की राशि उपलब्ध कराई जाएगी, जिसे बाद में अधिकतम 30,00,000/– रुपए तक बढ़ाया जा सकता है।
- पीड़ित के पुनर्वास हेतु 5,00,000/– रुपए निर्धारित किए गए हैं।

संशोधित स्कीम मंत्रालय को विचारार्थ भेज दी गई है। संबंधित ब्योरे **अनुलग्नक–IV** में दिए गए हैं।

(iii) दहेज प्रतिषेध अधिनियम में संशोधन को अंतिम रूप देना

राष्ट्रीय महिला आयोग ने सितंबर, 2008 में एक परामर्श सत्र आयोजित किया और इस सत्र में शामिल प्रतिनिधिमंडलों और अधिवक्ताओं द्वारा दिए गए सुझावों का उपयोग करके की गई सिफारिशों के आधार पर दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 में प्रस्तावित संशोधनों को अंतिम रूप दिया गया है। संशोधित सिफारिशें मंत्रालय को विचारार्थ भेज दी गई हैं। संबंधित ब्योरे **अनुबंध–V** में दिए गए हैं।

(iv) कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न से संरक्षण विधेयक, 2008 में संशोधन से संबंधित विधेयक

विधेयक का प्रारूप कार्यस्थल पर महिलाओं को यौन उत्पीड़न से निवारण और समाधान उपलब्ध कराने से संबंधित है। **'किसी भी महिला कर्मचारी के अतिरिक्त पीड़ित महिला की परिभाषा के अंतर्गत कार्य स्थल से संबंधित कोई भी महिला शामिल होगी, जिसमें किसी शैक्षणिक संस्था, विश्वविद्यालय आदि में विद्यार्थी, अनुसंधान अध्येता शामिल हैं।'** इसमें सरकार और निजी क्षेत्र, संगठित और असंगठित क्षेत्रों के अधीन स्थित सभी कार्यस्थल शामिल हैं। विधेयक के प्रारूप की मुख्य–मुख्य बातों में निम्नलिखित शामिल हैं:

- आंतरिक शिकायत समिति (आई सी सी) का गठन
- जिला अधिकारी की नियुक्ति
- जिला अधिकारी द्वारा स्थानीय शिकायत समिति का गठन
- संगठित और असंगठित क्षेत्र के लिए अलग से प्रावधान
- शिकायत की सामग्री और जांच की प्रक्रिया को प्रकाशित करने या उजागर करने के लिए दंड

संशोधित विधेयक मंत्रालय को विचारार्थ भेज दिया गया है। संबंधित ब्योरे **अनुबंध–VI** में दिए गए हैं।

(v) एस आर बतरा और अन्य बनाम श्रीमती तरुणा बतरा, विशेष अनुमति याचिका (सिविल 2005 का 6651–6652) मामले में उच्च न्यायालय के निर्णय की समीक्षा के उपरांत की गई सिफारिशें:

आयोग ने महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम में यथापरिभाषित "साझे घर" के संबंध में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के संबंध में अपनी सिफारिशें की हैं। इस मामले में न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि किसी "साझे घर" में निवास करने के अधिकार का दावा करने का हक केवल पत्नी को है, "साझे घर" का एकमात्र अर्थ ऐसे घर से है, जो पति के स्वामित्वाधीन हो या जिसे पति द्वारा किराये पर लिया गया हो, या ऐसा घर जो संयुक्त परिवार की संपत्ति हो, जिसका उसका पति एक सदस्य है। प्रश्नाधीन मकान प्रतिवादी की सास का है न कि उसके पति का, अतः प्रतिवादी उक्त मकान में अपने किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकती है। जिन आधारों पर समीक्षा करने का अनुरोध किया गया, वे हैं:

क) न्यायालय ने अपने निर्णय के पैरा 19 से 23 में महिला की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम, 2005 की धारा 2(ध) के अंतर्गत "साझे घर" पद की व्याख्या संकीर्ण और प्रतिबंधित अर्थों में की है;

ख) न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार नहीं किया है कि पीड़ित महिला दिए गए पते पर साझे घर के दूसरे तल पर रह रही थी और वह वैवाहिक विवाद के कारण जब अपने माता–पिता के घर में रहने के लिए चली गई, उस समय अपने पति के साथ रहते समय उस मकान का दूसरा तल उसके कब्जे में था। पीड़ित महिला को उसके इस मकान के अधिकार से उचित कानूनी प्रक्रिया के बिना वंचित नहीं किया जाना चाहिए था;

ग) माननीय न्यायालय ने महिलाओं की घरेलू संरक्षा से संरक्षा अधिनियम में उल्लेख किए गए इस सिद्धांत की अवहेलना की है कि घरेलू संबंध के अंतर्गत रह रही प्रत्येक महिला को "साझे घर" में रहने का अधिकार प्राप्त होगा, चाहे उसका उस घर पर कोई अधिकार, स्वामित्व या लाभकारी हित हो अथवा नहीं;

घ) धारा 17 किसी भी प्रकार से महिला को संपत्ति का स्वामित्वाधिकार अंतरित नहीं करती है। विवाहित महिला का "साझे घर" में रहने का अधिकार उसके विवाहित होने की स्थिति के कारण उत्पन्न होता है तथा उक्त अधिकार महिला की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम के अधिनियमन से पूर्व ही विद्यमान था। अतः यह अधिकार इस बात पर आधारित नहीं है कि वह महिला "साझे घर" में किसी अवधि के दौरान रही है। माननीय न्यायालय ने मंगत मल बनाम पुन्नी देवी (1995) 6 एस सी सी 88 मामले में विशेष रूप से यह कहा कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 में शब्द "भरण–पोषण" की परिधि में भोजन और वस्त्र के अतिरिक्त निवास का प्रावधान भी निश्चित रूप से शामिल हो। अतः साझे घर में निवास करने का अधिकार किसी भी विवाहित महिला का पहले से विद्यमान अधिकार है। धारा 17 के अंतर्गत पीड़ित महिला का "साझे घर" में रहने का अधिकार इस तत्य पर विचार किए बिना है कि वह साझे घर में एक उल्लेखनीय अवधि तक रही

है अथवा नहीं {2007(6) एम एल जे 205 (एमएडी) टी वंदना बनाम श्रीमती जयंती कृष्णामचारी};

ड) न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा है कि इस अधिनियम के अधिनियमन से पूर्व भी पत्नी का अपने ससुराल के घर में रहने का अधिकार, जहां तक हिंदुओं का संबंध है, उसके भरण–पोषण के अधिकार के हिस्से के रूप में मान्यताप्राप्त था। **बी पी अचला आनंद बनाम एस अप्पिरेडु और अन्य (220) 3 (एस सी सी 313) मामले में माननीय न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:**

"हिंदू पत्नी को अपने पति से भरण–पोषण प्राप्त करने का हक है। उसे यह हक है कि वह अपने पति के घर में और उसके संरक्षण के अधीन रहे। उसे यह भी हक है कि वह अपने पति के आचरण के कारण या पति द्वारा उसे अपने निवास स्थान पर भरण–पोषण देने से इनकार करने या ऐसे किसी भी उपयुक्त कारण, जिससे उसे अपने पति से अलग रहने के लिए बाध्य होना पड़ता हो, अलग निवास में भी रहने का हक है। निवास का अधिकार पत्नी के भरण–पोषण प्राप्त करने के अधिकार का एक अभिन्न अंग है।"

च) यह उल्लेख किया जाता है कि "साझे घर" के ऐसी संकीर्ण और प्रतिबंधित व्याख्या से पति को राहत प्राप्त हो सकती है, जो तलाक के लिए याचिका दायर करके या तलाक की याचिका दायर करने के अभिप्राय से ससुरालियों के साथ षडयंत्र करके उस मकान को छोड़कर उनके साथ किराए के किसी परिसर में रहने चला जाता है और तत्पश्चात अपनी पत्नी को छोड़ देता है।

छ) चूंकि प्रश्नाधीन संपत्ति का स्वामित्वाधिकार सास के पास है, अतः पीड़ित महिला उक्त मकान में किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकती। यह उल्लेख किया जाता है कि केवल इसलिए कि मकान सास के नाम था, इस संपत्ति को खरीदने के लिए प्रयुक्त धनराशि के लिए आय के स्रोत के संबंध में जानकारी प्राप्त नहीं होती। चूंकि मौजूदा मामले में प्रश्नाधीन मकान को खरीदने के लिए आय के स्रोत का निर्धारण नहीं किया जा सकता, अतः पीड़ित महिला को ऐसे साझे घर में निवास करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए।

ज) कानून का यह एक स्थापित सिद्धांत है कि लाभभोगी के कल्याण से संबंधित कानून की उदारतापूर्वक व्याख्या की जानी चाहिए और ऐसी व्याख्या लाभभोगी के पक्ष में की जानी चाहिए और चूंकि महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम घरेलू संबंध के अंतर्गत रह रही पीड़ित महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया है, और इसका उद्देश्य अन्य बातों के साथ–साथ, महिलाओं के लिए निवास स्थान की उपलब्धता सुनिश्चित करना है, अतः पीड़ित महिला के निवास करने के अधिकार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

झ) महिलाओं की घरेलू हिंसा से संरक्षा अधिनियम के अंतर्गत यह स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि "साझे घर" के स्वामित्व का "साझे घर" में निवास करने के अधिकार से कोई संबंध नहीं है {धारा 17(1)}। न्यायालय का कहना है कि प्रार्थित राहत प्रदान नहीं की जा सकती क्योंकि प्रश्नाधीन परिसर संयुक्त परिवार की संपत्ति नहीं है और इस कारण वह "साझा घर" नहीं हो सकता। यह भी धारा 17(1) में उल्लिखित स्पष्ट उपबंध का उल्लंघन करता है। ऐसी व्याख्या से यह निश्चित है कि अप्रवासी भारतीयों से विवाह के मामले में महिलाओं द्वारा ऐसी स्थिति में दायर किए आवेदनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा जिनमें पति द्वारा महिला से विवाह करके उसे अपने माता–पिता के घर में लाया जाता है तथा पत्नी के साथ कुछ महीनों तक रहने के पश्चात पति विदेश चला जाता है जबकि पत्नी अपने ससुराल के घर में रहना जारी

रखती है जो एक ऐसी संपत्ति है, जिसके संबंध में इस बात की पूरी संभावना है कि उसके सास–ससुर की स्व–अर्जित संपत्ति है। इस संदर्भ में बतरा मामले में निर्णय की व्याख्या को देखते हुए, न्यायालयों को स्वतः यह कहने की आवश्यकता होगी कि चूंकि इसे "साझा घर" नहीं माना जा सकता, अतः इस घर में पत्नी को रहने का कोई अधिकार नहीं है तथा यह उसके पति का कर्त्तव्य है कि वह उसके लिए वीज़ा का प्रबंध करे या उसे किसी नये घर में रखे। ऐसी व्याख्या से अधिनियम का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा।

ञ) ऐसी व्याख्या से ऐसी महिलाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना निश्चित है जो निवास के अधिकार के लिए संघर्ष कर रही है। माननीय बंबई उच्च न्यायालय के समक्ष दायर (वाद संख्या 2007 का 3072 में आदेश संख्या 2007 का 866 के संबंध में अपील) श्रीमती हेमाक्षी अतुल जोशी बनाम मुक्ताबेन करसनदास जोशी और अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि: "एस आर बतरा और मौजूदा मामले में तथ्य लगभग एकजैसे हैं। कानूनी स्थिति और तथ्यों पर विचार करने पर अपीलकर्ता अपनी सास के स्वामित्व वाले मकान में निवास के संबंधी में किसी कानूनी हक का दावा नहीं कर सकती ....." इस मामले में उक्त मकान वास्तव में पीड़ित महिला की ससुराल का मकान था किंतु माननीय न्यायालय ने उसका तर्क अस्वीकृत कर दिया।

(vi) स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986 में संशोधन

अधिनियम के कार्यक्षेत्र और इसकी अनुप्रयोज्यता में विस्तार करने के लिए **"विज्ञापन"** की परिभाषा में इलेक्ट्रानिक मीडिया या किसी अन्य मीडिया को शामिल किया गया है। **प्रतिषेध और दंडों से संबंधित उपबंध** पर एक अलग अध्याय शामिल किया गया है। किसी भी प्रकाशित/ प्रसारित/ टेलीकास्ट की गई सामग्री में महिलाओं को किस प्रकार निरूपित किया जाएगा, इसे शासित और विनियमित करने के लिए एक केंद्रीय प्राधिकारी की नियुक्ति का भी प्रस्ताव किया गया है। संबंधित ब्योरे **अनुलग्नक–VII** में दिए गए हैं।

(ख) न्यायालय के हस्तक्षेप

राजकुमारी अवस्थी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार–2008 सी आर आई एल जे 2539

भरण–पोषण के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 (1)(ख) और (ग) में यथानिहित उपबंधों के अनुसार,

यदि कोई व्यक्ति पर्याप्त साधन–संपन्न हो तथा निम्नलिखित के भरण–पोषण के लिए नकारता हो या अस्वीकार करता हो –

(ख) अपने ऐसे वैधानिक या अवैधानिक अवयस्क बच्चे का, जो विवाहित हो अथवा नहीं हो और जो अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में सक्षम न हो, या

(ग) अपने ऐसे वैधानिक या अवैधानिक बच्चे (जो विवाहित लड़की न हो), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली हो, तथा ऐसा बच्चा जो शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता अथवा क्षति के कारण अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हो।

उप–धारा 1(ग), जिसमें यह कहा गया है कि "अपने ऐसे वैधानिक या अवैधानिक बच्चे (जो विवाहित लड़की न हो), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली हो, तथा ऐसा बच्चा जो **शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता अथवा क्षति के कारण** अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हो" – यह एक अवरोधक उपबंध है तथा विशेषकर किसी सक्षम बच्चे और ऐसा बच्चा जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली हो, विशेषकर बालिका बच्चे के मामले में, कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। पर्याप्त साधन–संपन्न माता–पिता द्वारा भरण–पोषण प्राप्त करने का अधिकार ऐसी सभी अविवाहित

लड़कियों को उपलब्ध होना चाहिए, जो वयस्कता की आयु प्राप्त कर लेने पर भी अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हों । इस अधिकार के उपलब्ध होने से बालिका शिशु को किसी भी कठिनाई और अकिंचन की स्थिति से उबारा जा सकता है, जो भरण–पोषण से संबंधित उपबंध का एक मुख्य उद्देश्य है।

राज कुमारी अवस्थी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार– 2008 सी आर आई एल जे 2539 के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि धारा 125 (1)(ग) – उपर्युक्त उपबंध के सामान्य अध्ययन पर, यह स्पष्ट है कि पर्याप्त साधन–संपन्न किसी व्यक्ति के लिए अपनी वयस्क लड़की (अर्थात जब वह 18 वर्ष की आयु पार कर चुकी हो) जो अविवाहित हो, का भरण–पोषण करना तभी आवश्यक है यदि वह लड़की किसी प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता या क्षति के कारण अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हो – इसके अतिरिक्त, अन्य किसी भी स्थिति में उसे अपने माता–पिता से भरण–पोषण प्राप्त करने का अधिकार उपलब्ध नहीं है। इस उपबंध के अंतर्गत स्थिति यह है कि 18 वर्ष की आयु की कोई कालेज जाने वाली लड़की, जो अभी अविवाहित है, जब तक वह किसी शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता या क्षति के कारण अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ न हो, उसे उसके पिता द्वारा जो पर्याप्त साधन संपन्न है, भरण–पोषण उपलब्ध कराने के लिए अस्वीकार किया जा सकता है। किंतु यह अपेक्षा करना कि एक ऐसी अविवाहित लड़की जो अभी कालेज जा रही है या जो घर में रह रही है किंतु जिसका अभी विवाह नहीं हुआ है, और जिसके पास अपना स्वयं का भरण–पोषण करने के लिए स्वतंत्र आय का कोई साधन नहीं है, को उसके पर्याप्त साधन–संपन्न पिता द्वारा केवल इस आधार पर भरण–पोषण उपलब्ध कराने से इनकार किया जा सके कि संहिता की धारा 125(1)(ग) में जैसाकि अपेक्षित है, स्वयं का भरण–पोषण करने में उस लड़की की असमर्थता उसकी किसी शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता के कारण नहीं है, अत्यधिक अमानवीय और उत्पीड़क होगा और ऐसा करना सभी प्रकार से भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन होगा।

यह उपबंध विशेष रूप से त्रूटिपूर्ण और भेदभावपूर्ण प्रतीत होता है क्योंकि धारा 125(1) के अन्य खंडों, अर्थात खंड (क), (ख) और (घ) में, पर्याप्त साधन–संपन्न किसी व्यक्ति के लिए अपनी पत्नी, अपने वैधानिक या अवैधानिक अवयस्क बच्चों, जो विवाहित हों अथवा न हों या अपने माता–पिता जो अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में समर्थ न हों, को भरण–पोषण उपलब्ध कराना अपेक्षित है तथा इन श्रेणियों के व्यक्तियों को यह सिद्ध करने की कोई भी अतिरिक्त आवश्यकता नहीं है कि वे इस सम्मानजनक सामाजिक विधायन का लाभ प्राप्त करने के लिए शारीरिक अथवा मानसिक अपसामान्यता अथवा क्षति के कारण अपना स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हैं। यह उपबंध भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(3) और 39(ड.) और (च) की भावना के भी विरुद्ध प्रतीत होता है जिसमें राज्यों से यह कहा गया है कि वे महिलाओं और बच्चों के कल्याण हेतु तथा यह सुनिश्चित करने के लिए कि बच्चों और युवाओं का नैतिक और भौतिक दृष्टि से परित्याग करने से संरक्षण प्रदान करने के लिए कानून बनाएं। मामले के इस पहलू को दृष्टिगत रखते हुए, **यह सहमति हुई कि विधायिका द्वारा उप–धारा 125(1)(ग) में संशोधन किया जाए तथा पर्याप्त साधन–संपन्न माता–पिता से भरण–पोषण प्राप्त करने का बच्चों/लड़कियों का अधिकार ऐसी सभी अविवाहित लड़कियों को उपलब्ध कराया जाए जो वयस्कता की आयु प्राप्त करने के बाद भी स्वयं का भरण–पोषण करने में असमर्थ हों।**

इस आदेश की प्रति भारत के विधि आयोग तथा अन्य राज्यों के महिला आयोगों को भी उपयुक्त टिप्पणी हेतु प्रेषित की जाए। आयोग ने माननीय न्यायालय की राय से सहमति व्यक्त करते हुए, इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एक मध्यक्षेप आवेदन दायर किया, जिसमें यह अनुरोध किया

गया कि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1)(ग) भेदभावपूर्ण है और भारत के संविधान का उल्लंघन करती है और इसे भारत के संविधान के विरुद्ध घोषित किया जाए और तदनुसार इसे इसके मौजूदा रूप में हटा देने की आवश्यकता है।

(ग) आयोजित किए गए सेमिनार और सम्मेलन

1. "किराये पर कोख लेने और संबद्ध प्रजनन प्रौद्योगिकियों" विषय पर राष्ट्रीय महिला आयोग में आयोग की अध्यक्षा डॉ. गिरिजा व्यास की अध्यक्षता में 24.04.2008 को एक–दिवसीय सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् द्वारा संबद्ध प्रजनन प्रौद्योगिकियों के संबंध में निर्धारित दिशानिर्देशों पर चर्चा की गई।

2. "स्त्री अशिष्ट रूपण" विषय पर मुंबई, कोलकाता और हैदराबाद में कार्यशालाएं आयोजित की गईं। इन कार्यशालाओं में इस विषय पर मौजूदा कानून में संशोधनों पर परिचर्चा की गई, जिनके आधार पर उक्त अधिनियम में संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

"स्त्री अशिष्ट रूपण" विषय पर आयोजित एक कार्यशाला में विचारों का आदान–प्रदान करती हुई (बाएं से) डॉ. गिरिजा व्यास, श्रीमती रेणुका चौधरी

"स्त्री अशिष्ट रूपण" विषय पर आयोजित एक कार्यशाला में प्रेस से बातचीत करती हुई (बाएं से) डॉ. गिरिजा व्यास

3. "बलात्कार पीड़ितों को मुआवजा" विषय पर राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की ओर दिल्ली में 19 जून, 2008 को एक परामर्श सत्र का आयोजन किया गया। **इस परामर्श सत्र की अध्यक्षता माननीय महिला एवं बाल विकास मंत्री श्रीमती रेणुका चौधरी द्वारा की गई।** राष्ट्रीय महिला आयोग ने महिलाओं के हितों के लिए कार्य करने वाले गैर–सरकारी संगठनों और अन्य कार्यकर्ताओं से विचार–विमर्श करने के पश्चात एक योजना तैयार की है जिसके अंतर्गत बलात्कार पीड़ितों को अधिकतम 2 लाख रुपए तक की राशि का मुआवजा दिया जा सकता है।

4. "दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 में संशोधन" तथा अपराध (तेजाब से हमला) निवारण विधेयक, 2008 के प्रारूप पर विचार–विमर्श करने के लिए राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की ओर से 18 सितंबर, 2008 को नई दिल्ली में एक परामर्श सत्र का आयोजन किया गया। **इस परामर्श सत्र की अध्यक्षता माननीय महिला एवं बाल विकास मंत्री श्रीमती रेणुका चौधरी द्वारा की गई।**

5. "पूर्वोत्तर में महिलाओं द्वारा झेली जा रही समस्याओं" विषय पर 19 अप्रैल, 2008 को गंगटोक, सिक्किम में एक सेमिनार का आयोजन किया गया।

6. "रात्रि की पालियों में काम करने वाली महिलाओं" विषय पर 15 सितंबर, 2008 को बेंगलुरु में एक सेमिनार का आयोजन किया गया।

7. "वैवाहिक मुद्दों और चुनौतियों से संबंधित कानून" विषय पर 31 जनवरी, 2009 को दिल्ली में एक सेमिनार का आयोजन किया गया।

""वैवाहिक मुद्दों और चुनौतियों" विषय पर आयोजित किए गए सेमिनार में विचारों का आदान–प्रदान करते हुए (बाएं से) श्री एस. चटर्जी, डॉ. गिरिजा व्यास, श्री के.जी. बालाकृष्णन

आयोग द्वारा स्वतः संज्ञान लेकर दर्ज किया गया मामला – आई ए एस अधिकारी को बलात्कार का अभियुक्त बनाया गया :

राष्ट्रीय महिला आयोग का ध्यान मीडिया में प्रकाशित एक रिपोर्ट की ओर आकृष्ट किया गया, जिसमें बलात्कार के अभियुक्त श्री अशोक राय, जिन्होंने सिविल सेवा परीक्षा पास कर ली थी, की सजा दोषसिद्ध होने पर उच्च न्यायालय ने आजीवन कारावास कम करके साढ़े पांच वर्ष तक के कारावास में बदल दी थी, जिस अवधि को उस व्यक्ति ने जेल में पहले ही पूरा कर लिया था।

मामले का संक्षिप्त विवरणः

21 वर्षीया सुनीता ने 14 अप्रैल, 2003 को सल्फास की गोलियां खाकर आत्महत्या कर ली। मृतका द्वारा लिखे गए आत्महत्या के नोट में उसने स्पष्टतः यह लिखा था कि उसे श्री अशोक राय ने ऐसा कदम उठाने के लिए बाध्य किया। विद्वान विचारण न्यायालय ने अशोक राय को भारतीय दंड संहिता की धारा 306/376 के तहत दोषसिद्ध पाया और भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के तहत अपराध के लिए दस वर्ष के कठोर कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत किए गए अपराध के लिए आजीवन कठोर कारावास की सजा दी।

माननीय उच्च न्याालय ने विचारण न्याालय के आदेश के विरुद्ध दिनांक 09.02.2009 को दिए गए अपने निर्णय और आदेश में भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए श्री अशोक राय की दोषसिद्धि को रद्द करते हुए, यह कहा कि श्री अशोक राय की सुनीता द्वारा आत्महत्या किए जाने में किसी प्रकार की सहयोगी भूमिका का कोई प्रमाण नहीं है, जिसके आधार पर उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अंतर्गत दोषसिद्ध पाया जा सके। माननीय उच्च न्यायालय ने अपनी टिप्पणी में कहा कि मामले की संपूर्ण परिस्थितियों पर विचार करते हुए कि अपीलकर्ता साढ़े पांच वर्ष तक के कारावास की सजा भुगत चुका है और जेल में अपने अच्छे आचरण के आधार पर वह कारावास से छूटने का हकदार है; उसने जेल में रहते हुए कोई भी अशोभनीय आचरण नहीं किया है जिसका साक्ष्य यह है कि जेल में रहते हुए उसने सिविल सेवा की परीक्षा दी और उस परीक्षा में सफल घोषित किए जाने पर वह भारतीय प्रशासनिक सेवा में नियुक्ति हेतु पात्र पाया गया; हमारी राय यह है कि अपीलकर्ता द्वारा जेल में पहले ही बिताई जा चुकी अवधि उसे दंडित करने के लिए पर्याप्त है और इसी से संबंधित मामले में न्याय हुआ, यह समझा जाए।"

राष्ट्रीय महिला आयोग की चिंता यह थी कि एक ऐसा व्यक्ति जिसे बलात्कार जैसे जघन्य अपराध में दोषसिद्ध पाया गया हो, सरकारी सेवा में आने का प्रयास कर रहा था। राष्ट्रीय महिला आयोग ने कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग से इस आशय के स्पष्टीकरण की मांग की कि क्या किसी अत्यधिक गंभीर प्रकृति के अपराध (जो नैतिक अधमता से संबद्ध है) के मामले में दोषसिद्ध पाए गए व्यक्ति को सरकारी सेवा में प्रवेश करने से वंचित किया जा सकता है। कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग से प्राप्त उत्तर में यह कहा गया कि "परीक्षा में सफलता से किसी भी व्यक्ति को तब तक नियुक्ति पाने का अधिकार नहीं होता जब तक सरकार यह जानने के लिए कि आवेदक का चरित्र और उसका पूर्ववृत्त सेवा में नियुक्ति के लिए हर प्रकार से उपयुक्त है, जांच–पड़ताल करके पूर्णतः संतुष्ट न हो जाए।"

इस निर्णय से एक अत्यधिक अधोगामी पूर्वोदाहरण स्थापित होता है। "बलात्कार के दोषी के मामले में यह एक विशेष मामला था, जिसमें उच्चतम न्यायालय में जाने का निर्णय लिया गया। आयोग ने दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध 16 मार्च, 2009 को उच्चतम न्याालय में विशेष अनुमति याचिका दायर की।